ARYAVART SHODH VIKAS PATRIKA
RNI TITLED NO. UPBBIL04292
RNI REG. NO. UPBBIL/2014/66218 PP. NO.- 169-172

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

अवक्रमित प्रकृति का संदेश : कोरोना प्रकोप

(Massage of Degraded Nature : Corona Virus)

अंजनी प्रसाद दूबे

एसोसिएट प्रोफेसर, भूगोल विभाग,राजकीय महाविद्यालय – लक्सर, हरिद्वार (उत्तराखण्ड), भारत

Received- 06.06.2020, Revised- 09.06.2020, Accepted - 15.06.2020 E-mail: apdukd@gmail.com

सारांश : *सार्वभौमिक एकता के सिद्धान्त की समझ एवं विशद विवेचना में पारंगत मानव समुदाय अपने कार्यों द्वारा इसके विपरीत निरन्तर इसकी उपेक्षा करता चला आ रहा है। मानव आवश्यकताओं एवं इच्छाओं की कभी न खत्म होने वाली लिस्ट ने प्राकृतिक संसाधनों के दोहन की गति में निरन्तर वृद्धि की है। महात्मा गाँधी ने कहा था– प्रकृति के पास सभी की जरूरत पूरी करने के लिए पर्याप्त संसाधन है, परन्तु वो किसी की लालच पूरी नहीं कर सकती।''लगभग 2 लाख वर्ष पूर्व पृथ्वी पर अपने अभ्युदय से लेकर आज तक मानव एवं प्रकृति के सम्बन्ध देश, काल एवं समय के सन्दर्भ में अल्पाधिक ह्रासोन्मुख ही होते गये। मानव प्रौद्योगिकी के हर नये कदम ने प्रकृति को अवक्रमित ही किया है। चाहे वह 7500 ई.पू. कृषि की शुरुआत रही हो जिसने वनाग्नि एवं मृदा क्षरण में वृद्धि की, या 3400 ई.पू. पहिये का आविष्कार अथवा धातुओं का प्रयोग, जिसमें 3000 ई.पू. काँसे एवं 1400 ई.पू. लोहे के सामानों का प्रयोग रहा हो।*

कुंजीभूत शब्द– सार्वभौमिक एकता, विशद, मानव समुदाय, दोहन, अभ्युदय, संसाधन, प्रौद्योगिकी, अवकमित ।

कृषि, पशुपालन, पहिये तथा धातु के विविध प्रयोगों के बावजूद 18वीं शदी तक मानवीय कार्य द्वारा की गयी क्षति प्रकृति की सहन शक्ति के सीमा के भीतर समायी रही। और मानव एवं प्रकृति के मध्य सम्बन्ध कमोवेश सन्तुलित बने रहे। परन्तु 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में कई क्षेत्रों में तकनीकी, आर्थिक, सामाजिक एवं सांस्कृतिक परिस्थितियों में हुए बड़े बदलावों ने प्राकृतिक तत्त्वों की गुणवत्ता एवं मात्रा में तीव्रता से क्षरण प्रारम्भ किया, जिसमें महत्त्वपूर्ण भूमिका निभायी– सूत्री वस्त्र, लौह इस्पात उद्योग एवं स्वचालित मशीनों के निर्माण ने इस प्रवृत्ति का जैसे–जैसे अन्य देशों में विस्तार होता गया समय एवं जनसंख्या वृद्धि के साथ प्राकृतिक संसाधनों के दोहन एवं विनाश की गति भी बढ़ती चली गयी।

व्यापक पैमाने पर वनों एवं वन्य जीवों का विनाश हुआ। नदी घाटियों के अनुकूल पर्यावरण से उत्पन्न हुई मानव सभ्यता, वन प्रदेशों, पर्वतों, पठारों, मरुभूमियों एवं हिमाच्छादित प्रदेशों में सघन रूप से विस्तारित होती गयी। साथ ही प्राकृतिक तत्त्वों का मूल स्वरूप भी परिमार्जित एवं विनष्ट होता चला गया। विश्व वन्य जीव कोष के अनुसार मानवीय क्रियाकलापों के कारण हजारों प्रजातियाँ विलुप्त होने की कगार पर हैं। यह विनाश वास्तव में मानव सभ्यता की नींव या जड़ पर ही प्रहार है। एक अनुमान के अनुसार पृथ्वी पर 300 लाख प्रजातियों के जीव–जन्तु एवं पादप समूह हैं। इनमें से 724 प्रजातियाँ विलुप्त हो चुकी हैं एवं पादपों की लगभग 25000 प्रजातियाँ एवं जीव–जन्तुओं की 900 प्रजातियाँ निकट भविष्य में विलुप्त होने के कगार पर हैं।

मानवीय क्रियाकलापों के अनियन्त्रित विस्तार से विभिन्न प्राकृतिक तत्त्वों एवं जीवों के विलोपन एवं गुणवत्ता क्षय का दुष्प्रभाव भी मानव समाज पर समय के साथ–साथ भयावह रूप लेता जा रहा है।

वर्तमान में प्रदूषण जन्य विभिन्न समस्याओं एवं रोगों की जड़ में मानव की विभिन्न विनाशकारी क्रियाएँ रही हैं। गाँधी जी ने कहा था– ''आधुनिक शहरी औद्योगिक सभ्यता में ही उसके विनाश का बीज सन्निहित है।''

उद्देश्य–

(1) पर्यावरण अवक्रमण की स्थिति के प्रति जन–समुदाय को निरन्तर प्रेरित एवं जागरूक करना।

(2) मानव सभ्यता के दीर्घजीवन एवं उत्तम स्वास्थ्य के लिए प्राकृतिक तत्त्वों के क्षय को सीमित करने का प्रयास।

(3) कोरोना जैसे संकट के दृष्टिगत मानव की भौतिकतावादी निरंकुश आर्थिक विचारधारा को पुनः मूल्यांकन हेतु प्रेरित करना।

(4) वैश्विक स्तर पर आर्थिक विकास के ठहरे पहिये को पुनः अंधी दौड़ में शामिल होने से पहले विकास के कार्यो में पर्यावरणीय दृष्टिकोण को अनिवार्य रूप से शामिल करना।

परिकल्पना–

(1) बढ़ती जनसंख्या तथा मानव की अनियंत्रित क्रियायें, पर्यावरण अवक्रमण का प्रधान कारण है।

अनुरूपी लेखक

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

(2) जैव प्रजातियों के विलोपन एवं संकटापन्न होने तथा प्राकृतिक तत्त्वों की गुणवत्ता में ह्रास का दुष्प्रभाव मानव समाज एवं स्वास्थ्य पर पड़ रहा है।

(3) मानवीय हस्तक्षेप के कारण जब–जब प्रकृति की सहनशक्ति की सीमा क्षीण हुई है तब–तब प्रकृति विभिन्न प्रकोपों के माध्यम से हमें सावधान करती है।

(4) मानव सभ्यता के दीर्घजीवन के लिए विकास को बहुआयामी बनाते हुए पारिस्थितिकी नियमों का अनुपालन आवश्यक है।

जीवधारियों के लिए अनुकूल दशाओं से युक्त एकमात्र ज्ञात ग्रहीय पिण्ड रत्नगर्भा वसुन्धरा की शुद्धता दिनों दिन ह्रासमान होकर संकट की स्थिति में पहुँच रही है। जिसके कारण जीवनदायी सर्वसुलभ जल एवं वायु जैसे प्राकृतिक तत्त्व भी अपनी गुणवत्ता खोते जा रहे हैं। और महानगरों में शुद्ध जल एवं वायु की प्राप्ति दुष्कर होता जा रही है।

वास्तव में वर्तमान युग मिलावट का ही है। प्राकृतिक तत्त्वों की गुणवत्ता में ह्रास का प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष परिणाम मानव स्वास्थ्य पर पड़ रहा है। यह तथ्य विचारणीय है कि तुलनात्मक रूप में मनुष्य की रोग प्रतिरोधक क्षमता प्राकृतिक तत्त्वों की शुद्धता के साथ ही कम होती जा रही है।

मानव के कार्यो द्वारा प्राकृतिक वास स्थलों, वन एवं वन्य जीवों के अतिशय दोहन का परिणाम कभी–कभी नूतन संक्रामक रोगों एवं प्राकृतिक आपदाओं के रूप में हमारे सम्मुख आता है। वर्तमान कोरोन संकट इसी की एक कड़ी है।

वन्य जीवों के विनाश के कारण उनसे उत्पन्न होने वाले संक्रामक रोग

बीमारी/वायरस	समय	वाहक जीव
1. ब्लैक डेथ	14वीं शताब्दी	चूहों द्वारा
2. इबोला	1976	चमगादड़
3. HIV (एड्स)	1980	चिम्पैंजी/वनमानुष
4. प्लेग	1990	पिस्सू/चूहों द्वारा
5. मलेरिया, फाइलेरिया	–	मच्छरों द्वाराडेंगू, चिकन गुनिया
6. लस्सा वायरस	–	चूहों द्वारा
7. निपा वायरस	1995	चमगादड़/सुअरों द्वारा
8. सार्स	2002	चमगादड़
9. वर्ड फ्लू (HSN1)	2004–07	मुर्गों/बत्तखों
10. स्वाइन फ्लू	2009	सुअर
11. कोविड–19	2019 से	चमगादड़ (कोरोना वायरस)
12. माल्टा ज्वर	–	कुत्ते से

जीवों के प्राकृतिक वास स्थलों के विनाश एवं जंगली जीवा के शिकार के कारण पर्यावरण की क्षति तो होती ही है साथ ही समय–समय पर अनेक जीवाणु/विषाणु भी मानव समाज को गम्भीर हानि पहुँचाते हैं। संक्रामक रोगों के ऐतिहासिक विवेचन से स्पष्ट होता है कि लगभग 61 प्रतिशत से अधिक संक्रामक रोग एवं महामारियाँ जानवरों पर अत्याचार के कारण ही फैली हैं।

COVID-19 (Corona Virus) प्रकृति पर ऐसे ही अत्याचारों का परिणाम है।

मानव के प्रकृति पर बढ़ते अतिक्रमण को ऐतिहासिक काळ क्रमानुसार चार चरणों में विभक्त कर सकते हैं–

1. औद्योगीकरण के पूर्व का समय
2. औद्योगीकरण के बाद का समय
3. भूमण्डलीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण का समय
4. 21वीं शदी की तकनीकी प्रगति का समय

(1) पूर्व औद्योगिक काल– प्राकृतिक संसाधनों पर जनसंख्या के न्यून दबाव के कारण मानवीय क्रियायें 18वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक कमोवेश प्रकृति के सहनशक्ति की सीमा के भीतर रहीं और प्रकृति मानवीय कार्यों से हुई क्षति की भरपाई करने में समर्थ बनी रही। इसके साथ ही प्राकृतिक संसाधनों का निर्दयतापूर्वक दोहन कुछ ही क्षेत्रों तक सीमित रहा है। और उस समय तक जनसंख्या भी वर्तमान जनसंख्या की लगभग आधी थी और धरातल का एक बड़ा क्षेत्र मानव अतिक्रमण से मुक्त था।

(2) औद्योगिक क्रान्ति तथा बाद का समय– 19वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में स्वचालित मशीनों के आविष्कार एवं महायुद्धों की आवश्यकताओं के दृष्टिगत औद्योगिक गतिविधियों में तीव्र वृद्धि हुई। एक दूसरे से आगे निकलने की होड़ में जल, थल तथा नभ में उपयेाग के लिए अनेक वस्तुओं के निर्माण हुए जिससे प्राकृतिक संसाधनों का दोहन बढ़ता चला गया और औद्योगिक एवं आर्थिक विकास की यह दौड़ धीरे–धीरे विश्वव्यापी होती गयी। समय के साथ–साथ पर्यावरण अवक्रमण की दर भी बढ़ती चली गयी। 1960 के शुरुआती समय में विश्व में सघन कृषि, भौतिकतावादी जीवनशैली, समुद्री एवं वन्य जीवों के शिकार में वृद्धि, बढ़ती जनसंख्या, बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजनाओं की बढ़ती संख्या के कारण पर्यावरण की क्षति बढ़ती गयी। 1960 से 1970 के मध्य इन विभिन्न कार्यों का प्रत्यक्ष प्रभाव पर्यावरण पर दिखने लगा, साथ ही सामाजिक तथा स्थानिक असमानता, अवशिष्ट पदार्थों का निस्तारण, प्राकृतिक आपदाओं का संकट, इत्यादि समस्याओं ने विश्व का ध्यान इस ओर आकृष्ट किया। परिणामतः 1972 में Only one Earth and Our Common Future के संकल्प के साथ संयुक्त राष्ट्र के तत्वावधान में स्टॉकहोम में पर्यावरण की उभरती चुनौतियों एवं सतत विकास की संकल्पना को

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

लेकर कान्फ्रेंस का आयोजन किया गया।

(3) भूमण्डलीकरण एवं आर्थिक उदारीकरण का काल– विकास का जो मॉडल पश्चिमी देशों ने अपनाया धीरे–धीरे वह आर्थिक मॉडल विकासशील एवं अल्प विकसित देशों के लिए आदर्श बनता गया। आर्थिक उदारीकरण की प्रक्रिया ने स्वतन्त्र एवं मुक्त व्यापार को प्रोत्साहन देकर अल्प विकसित एवं विकासशील देशों द्वारा विकसित देशों में कच्चे माल के निर्यात को और गति प्रदान की। परिणामतः प्राकृतिक संसाधनों का अन्धाधुन्ध विदोहन तीव्र हो गया। भूमण्डलीकरण के दौर में ब्याज की निम्न दरें, अधिकाधिक प्रौद्योगिकी का हस्तान्तरण तथा बड़ी मात्रा में पूँजी प्रवाह इत्यादि कारकों ने प्राकृतिक संसाधनों के दोहन में राष्ट्रों के मध्य सीमाओं को समाप्त कर दिया। यद्यपि इस दौरान रोजगार, अवस्थापनात्मक सुविधाओं एवं विलासिता की सुविधायें भी तेजी से बढ़ी, परन्तु इनका मूल्य व्यापक स्तर पर पर्यावरण अवक्रमण से चुकाना पड़ रहा है। इसके साथ सामाजिक एवं स्थानिक असमानतायें भी बढ़ती गयी। मानव जीवन की गुणवत्ता के मापन के लिए UNDP द्वारा 1990 से प्रतिवर्ष मानव विकास सूचकांक की गणना प्रारम्भ की गयी। इसके साथ ही पर्यावरण अवनयन से होने वाले दुष्प्रभावों के दृष्टिगत अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर विभिन्न कानूनों, नियमों एवं समझौतों पर सहमति बनाने के प्रयास हुए हैं–

1.1948 में प्रकृति के संरक्षण के लिए अन्तर्राष्ट्रीय संघ की स्थापना हुई। बाद में यही संघटन (IUCN) 1963 से विलुप्त एवं असुरक्षित दुर्लभ जैव प्रजातियों की जानकारी RED DATA BOOK के नाम से जारी करती है।

2. 22 अप्रैल 1970 को अमेरिकी सीनेटर– जेराल्ड नेल्सन ने पर्यावरण शिक्षा के लिए एक आयोजन किया, जो बाद में 22 अप्रैल को पृथ्वी दिवस के रूप में मनाया जाने लगा।

3. 15 से 16 जून 1972 को स्वीडन के स्टॉकहोम में मानव–पर्यावरण सम्मेलन का आयोजन किया गया।

4. 1987 को ओजोन क्षरण की समस्या को लेकर कनाडा के मान्ट्रियाल में एक समझौता हुआ।

5. पर्यावरण संरक्षण को लेकर 1992 ब्राजील के रियो–डि–जेनेरो में पृथ्वी सम्मेलन हुआ।

6. 1997 में वैश्विक ताप वृद्धि की समस्या के लिए क्योटो में सम्मेलन हुआ। जिसे क्योटो प्रोटोकाल कहा गया।

7. 2002 में द. अफ्रीका के जोहान्सवर्ग में सततें विकास (Sustainable Development) की योजना के क्रियान्वयन के लिए सम्मेलन का आयोजन हुआ।

8. 2012 में जलवायु परिवर्तन के विषय पर 'दोहा' में सम्मेलन का आयोजन किया गया।

भारत में भी पर्यावरण संरक्षण के लिए भारतीय संविधान में दो अनुच्छेद, भाग IV A अनुच्छेद 51A और भाग IV अनुच्छेद 48A जोड़े गये। 48, पर्यावरण सुरक्षा एवं सुधार के लिए तथा 51, नागरिकों को वनों, नदियों, झीलों, वन्य जीवों इत्यादि की रक्षा एवं सुधार के कर्त्तव्य से सम्बन्धित है। इसके अतिरिक्त–

1. 1972 वन्य जीव संरक्षण अधिनियम
2 1980 वन संरक्षण अधिनियम
3 1981 वायु प्रदूषण अधिनियम
4. 1986 पर्यावरण संरक्षण अधिनियम
5 2002 जैव विविधता अधिनियम
6. 2010 राष्ट्रीय हरित प्राधिकरण अधिनियम प्रमुख हैं।

(4) 21वीं शदी एवं पर्यावरण– 21वीं शदी आर्थिक भूमण्डलीकरण के विस्तार के साथ सूचना–संचार, मोबाइल एवं कम्प्यूटर संस्कृति के विस्तार का दौर है। इस दौरान में शक्ति के नये केन्द्रों का उभार हुआ है। और इस शक्ति के वर्चस्व की होड़ में सूक्ष्म संसाधनों के दोहन के साथ अन्तरिक्ष के क्षेत्र में प्रतियोगितायें बढ़ी है। बढ़ती जनसंख्या एवं उत्पादन में तीव्र वृद्धि के कारण प्राकृतिक संसाधनों का रिक्तीकरण तीव्र हुआ है। साथ ही प्रदूषकों की मात्रा में वृद्धि हुई है। पर्यावरण विनाश के प्रभाव अब प्रत्यक्ष दिख रहे हैं और वे मानव समुदाय को पीड़ित भी कर रहे हैं। बहुउद्देश्यीय नदी घाटी परियोजना, नाभिकीय संयंत्र, खनन क्षेत्रों में वृद्धि, यात्रा मार्गों का विस्तार, आवासीय एवं औद्योगिक क्षेत्रों के प्रसार इत्यादि से वानस्पतिक, आर्द्रभूमि और कृषि भूमि इत्यादि का व्यापक अतिक्रमण हुआ है। विश्व खाद्य संगठन के अनुसार 1700 ई. से. 2000 ई. के मध्य शीतोण कटिबन्धीय वन 400 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र से घटकर 10 मिलियन हेक्टेयर क्षेत्र पर सीमित हो गये हैं, इसके साथ ही उष्णकटिबन्धीय वनों के कटान की गति और तीव्र रही है। जबकि विश्व की आधी से अधिक जन्तु एवं पादप प्रजातियाँ इन्हीं उपोष्ण एवं उष्ण कटिबन्धीय वनों में निवास करती हैं।

विश्व वनभूमि–2016

स्थान	वनभूमि क्षेत्रफल (वर्ग किमी.)
सब–सहारा एवं अफ्रीका	6115290
द. एशिया	835310
द. अमेरिका	6573934,
मध्य पूर्व	217360
लैटिन अमेरिका	8992083
यूरोप एवं म. एशिया	10438609
पूर्वी एशिया	6421326
विश्व	39958245 (30 प्रतिशत)

मनुष्य की अत्यधिक संग्रह की प्रकृति तथा वस्तुओं

ISSN NO.-2347-2944 (Print)
e-ISSN NO.-2582-2454 (Online)
Vol.-13, No.-I, Issues-16 YEAR- June. -2020

में नित बदलाव की लिप्सा के कारण नगरीकरण, औद्योगीकरण तथा इलेक्ट्रॉनिक कचरे का निस्तारण कठिन होता जा रहा है। इसी प्रकार कृषि क्षेत्रों में अधिक उत्पादन के दबाव के कारण मशीनीकरण, उर्वरकों, कीटनाशकों तथा खरपतवारनाशी रसायनों के बढ़ते इस्तेमाल के कारण कृषि उत्पादों की गुणवत्ता प्रभावित हुई है।

21वीं शदी की पर्यावरणीय चुनौतियों में बढ़ती जनसंख्या, वैश्विक तापमान में वृद्धि, जलवायु परिवर्तन, सागरीय प्रदूषण, जैव विविधता ह्रास इत्यादि शामिल है। इन विविध चुनौतियों से निपटने के लिए यद्यपि अन्तर्राष्ट्रीय एवं राष्ट्रीय स्तर पर काफी प्रयास किये जा रहे हैं। परन्तु आवश्यकता प्रकृति के जीवनदायी गुणों को पहचान कर उसके प्रति अनुकूल आचरण करने एवं विश्व समुदाय को मानव जाति के भविष्य के लिए पर्यावरण सम्बन्धी लम्बित आवश्यक मुद्दों (जैसे हरितगृह उत्सर्जन वाली गैसों की मात्रा में कटौती इत्यादि) पर सहमति बनाने की है। साथ ही प्राचीन वैदिक दर्शन, गाँधी एवं विनोबा भावे जैसे व्यक्तियों के सादा जीवन उच्च विचार, सर्वोदय, स्वदेशी के विचारों की विश्व समुदाय को आत्मसात् करने की आवश्यकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. Darwin, C. 1859: The Origin of Species, Murray, Landon.
2. Dibshit, R.D. 1984 : Geography and Teach ing of the environment in Geography and teaching of environment, Geog. Dept. Poona University.
3. Embleton, C. 1989 : Natural Hazards and Global change, ITC Journal 1989-3/4, pp. 169-178.
4. Kelley Lee (2003) : Health Impacts of Glo balization towards global governance Palgrane Macmillan, p. 131, ISBN-0-333-80254-3
5. World Health Organization : Corona Virus disease 2019 (Covid-19) Situation Report, 2&3 Aprial 2020.

*****